REVIEW OF RESEARCH

सहकारिता आंदोलन की समस्याएँ

डॉ. मुकेश कुमार ठाकुर

ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514
VOLUME - 8 | ISSUE - 8 | MAY - 2019

1. सहकारिता का विकृत रूप–
सहकारी साख समितियों से मुख्यतः धनी कृषकों को ही ऋण मिलते हैं। यहाँ तक कि महजनों और साहूकारों को भी इनसे ऋण मिल जाते हैं, परन्तु निर्धन और छोटे किसानों को उनसे साख नहीं मिल पाती।[1] सहकारी विपणन समितियों का केवल उन्हीं कृषकों के लिए उपयोग है जिनके पास विपण्य आधिक्य है। छोटे किसानों के पास विपण्य आधिक्य होता ही नहीं हैं। उर्वरकों, बीजों तथा यन्त्रों को उपलब्ध कराने वाली सहकारी समितियों का उपयोग कर पाने में छोटा किसान असमर्थ है।

2.स्वाभाविकता का अभाव– पाश्चात्य देशों में जहाँ इसे पर्याप्त सफलता मिली है, साधनहीन व्यक्तियों ने पारस्परिक सहयोग द्वारा स्वावलम्बन के सिद्धान्त को स्वीकार कर इसे व्यवहार में परिणत किया है। भारत में इस आंदोलन का सूत्रपात सरकार के प्रयत्नों से हुआ। आज भी यह सरकारी प्रोत्साहन पर ही निर्भर है न कि जनता की सवेच्दा पर। पर हेनरी डब्ल्यु0 वुल्फ के अनुसार सरकार द्वारा संचालित सहकारी आंदोलन महत्त्वहीन है। यदि इससे कुछ उपयोगिता प्राप्त करनी है तो यह जनसाधारण द्वारा ही चलाया जाना चाहिए।[2] सहकारी संस्थाओं से संबद्ध सरकारी कर्मचारी न केवल सहकारिता के सिद्धानतों से अनभिज्ञ हैं अपितु वे भ्रष्ट भी है रूचि नहीं होती। ओर उनमें सहकारी आंदोलन को सबल बनाने का सामर्थ्य भी नहीं है।

3. वित्तीय साध्नों का अभावः–
आरम्भ– आरम्भ में यह विश्वास प्रकट किया गया था कि सहकारी समितियों के सदस्यों में बचत करने की इच्छा जागृत होगी और इस प्रकार भारी मात्रा में कार्यशील पँजी उपलब्ध हो सकेगी। परन्तु ऐसा हुआ नहीं केन्द्रीय और राज्य सहकारी बैंक भी जन–साधारण से भारी मात्रा में निक्षेप प्रभाप्त करने में असमर्थ रहे।

4. साख के अलावा अन्य पक्षों की उपेक्षा– भारत में सहकारी समितियों के द्वारा मुख्यतः केवल अल्पकालीन साख की ओर ही ध्यान दिया गया है। अतएव इससे कृषि विकास में कोई विशेष सहायता नहीं मिल सकी है। भारत में बहुद्देश्यीय अथवा सेवा सहकारी समितियों की असंतोषजनक प्रगति के कारण सहकारिता भारत के कृषि विकास से प्रभावी तत्त्व नहीं बन पायी है।

5. केवल उत्पादन कार्यों के लिए ऋण देना– इस नीति का उद्देश्य यह है कि जब कृषकों को अनुपादक कार्यों आदि पर अपव्यय नहीं करेंगे। परन्तु सामान्य भारतीय कृषक वस्तुतः वह साधनहीन है और बहुआ उसको अपनी अनिवार्यताओं को संतुष्ट करने के लिए ऋण लेने पड़ते हैं।

6. निष्ठा का अभाव– भारत में सहकारी समिति के सदस्यों में प्रायः वांछनीय निष्ठा का अभाव देखने को मिलता है। देश में सहकारी उपभोक्ता भंडरों की असफलता का प्रधान कारण यही है। अनेक व्यक्ति सहकारी समिति संगठित कर उसका प्रबन्ध हथियाने की चेष्टा करते हैं। समिति की सफलता में उनकी विशेष

7. **अवैतनिक प्रबन्ध–** भारत में जहाँ कठिन परिश्रम के बाद भी व्यक्तियों के लिए संतोषजनक आय अर्जित कर पाना सम्भव नहीं होता सहकारी समितियों को कुशल अवैतनिक सेवाएँ नहीं मिल पातीं। जो लोग प्रबन्ध समिति का उत्तरदायित्व संभालते हैं वे अपना कार्य भली प्रकार नहीं करते।
8. **व्यावसायिक सिद्धान्तों की उपेक्षा–** भार में सहकारी समितियाँ वयावसायिक सिद्धानतों का सच्चाई के साथ पालन नहीं करतीं। साख समितियाँ ऋणों की वापसी पर जोर न देकर प्रायः लेख परिवर्तन भी कर लेती हैं।
9. **क्षेत्रीय असन्तुलन–** दक्षिण भारत में जबकि सम्पूर्ण देश की जनसंख्या का केवल 1/3 भाग ही है तो वहाँ पर भारत की सहकारी समितियों की सम्पूर्ण सदस्यता का 3/4 भाग पाया जाता है।[3]
10. **सामाजिक प्रभावों में असफलता–** भार में सहकारिता आन्दोलन का अभी तक कोई विशेष सामाजिक प्रभाव नहीं हुआ है।

सहकारिता आन्दोलन 1919 से 1929 तक– 1919 के राजनीतिक सुधारों के अनुसार सहकारिता प्रानतीय सरकारों का हस्तानतरित विषय (provincial transferred subject) बन गयी। अतएव इसके संचालन का भार अब प्रान्तीय सरकारों के हाथों में आ गया। भिन्न–भिन्न प्रानतों ने अपनी आवश्यकतानुसार नये–नये अधिनियमें को निर्मित किया बम्बई ने 1925 में अपनी–अपनी आर्थिक स्थितियों के अनुसार अलग–अलग अधिनियम बनाया। इससे साकारिता के तीव्र गति प्राप्त हुई। कुछ प्रान्तों में सहकारिता आन्दोलन की प्रगति का अध्ययन करने एवं आवश्यक सुझाव देने के लिए समितियों की भी नियुक्ति की गई। सन् 1926–28 के राजकीय कृषि आयोग (Royal Commission on Agriculture) ने भी

सहकारिता विकास पर अधिक जो दिया था। इस प्रकार 1919 से लेकर 1929 के बीच सहकारिता आन्दोलन की प्रगति तीव्र गति से होती रही। नीचे की तालिका से यह स्पष्ट होता हैः–

वर्ष	समितियों की संख्या (हजार)	सदस्यों की संख्या (लाख)	क्रियाशील पूँजी (करोड़ रूपयें)
1916 से 1920	28.48	11.3	15.18
1921 से1925	57.71	21.75	36.36
1926 से 1930	93.94	36.89	74.89

किन्तु इस काल में समितियों द्वारा दिए गए ऋण का अधिकांश लौटाया नहीं जा सकता जिससे सहकारी समितियों की बहुत अधिक पूँजी मारा पड़ गई। किन्तु विकास के इस सतर पर इस ओर बहुत कम ध्यान दिया गया। अतएव इस काल में सहकारिता का प्रचार योजनारहित ढंग से होता रहा।[4]

सन् 1929 से 1939 तक– 1929 से महान् व्यवसायिक मन्दी प्रारम्भ हुइ जिससे इस आन्दोलन को बहुत ड़ा धक्का लगा। अन्न का भाव गिर जाने के कारण ऋण वसूली की गति धीमी पड़ गयी। यह बात लगभग सारे देश में एक समान पायी जाने लगी। ऐसी परिस्थिति में समितियों की संख्या में वृद्ध की अपेक्षा उनके पुनर्निर्माण पर ही अधिक जोर दिया जाने लगा। 1935 में रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया (Reserve Bank of India) की स्थापना हुई। इसके अन्तर्गत एक कृषि साख विभाग (Agricultural Credit Department) का निर्माण हुआ जिसका कार्य कृषि के विकास के लिए आर्थिक सहायता देना था। इसी कृषि विभाग की सहायता से रिजर्व बैंक ने सहकारिता आन्दोलन में सुविधा लाने के प्रश्न का अध्ययन किया और साथ ही उनके पुनर्निर्माण के लिए महत्त्वपूर्ण सुझाव दिया। 1929 से 1939 तक के काल को सहकारिता आंदोलन की अवनति और पुनर्निर्माण का काल कहा जाता है।

1929–30 की महन मन्दी और उसके बाद की परिस्थितियों ने भारतीय सहकारिता आंदोलन के सम्बन्ध में कम–से–कम चार पाँच तथ्यों को स्पष्ट किया। प्रथम, इसने स्पष्ट किया कि भारत के अधिकांश क्षेत्रों में सहकारी आंदोलन का प्रारम्भिक दोष अभी भी विद्यमान है– यह दोष कि सहकारिता आन्दोलन भारतीय ग्रामीण जीवन के ढाँचे के अनुकूल अभी तक नहीं हो पाया है। (2) द्वितीय, यह आन्दोलन अब भी एक बाह्य शक्ति के रूप में था न कि देश के ग्रामीण जीवन के अनतरतम से निकली हुई शक्ति के रूप में। इसलिए यह अब भी संकटों का सामना करने के लिए अथवा कृषकों की सहायता करने के लिए साधन–शक्ति–सम्पन्न नहीं हो पाया था। (3) तृतीय, यों तो सहकारिता आन्दोलन का देश में विकास संतोषजनक नहीं ही हुआ है किनतु जिन क्षेत्रों में इसका विकास हुआ भी है उनमें भी इस आंदोलन की शक्ति एवं क्षेत्र इतने सीमित है कि यह व्यापक

पुनर्निर्माण कार्यक्रम को पूर्ण नहीं कर सकता। (4) चतुर्थ, अपनी विफलता के बावजूद यह आन्दोलन भारतीय कृषकों की मुक्ति की एक मात्र आशा है।

द्वितीय विश्व युद्ध और सहकारिता आन्दोलन–1939 में द्वितीय महायुद्ध छिड़ने के साथ–साथ वस्तुओं के मूल्यों में वृद्धि के कारण कृषकों की आय बढ़ने लगी इससे समितियों की स्थिति में सुधार होने लगा। युद्ध के कारण देश में अन्न वस्त्र चीनी, लोहा आदि वस्तुओं की कमी हो गई जिससे सरकार द्वारा इन पर नियन्त्रण किया गया। नियंत्रित वस्तुओं को प्रापत करने में भी अनेक कठिनाइयाँ होने लगीं। इससे जनता ने इन्हें प्रापत करने के लिए उपभोक्ता भण्डारों की संख्या में वृद्धि होने लगी। सरकार ने भी उन्हें प्रोत्साहित करने के लिए नियंत्रित वस्तुओं का वितरण इनके हाथ सौंप दिया। उपभोक्ता भण्डारों के साथ–साथ

उत्पादक–समितियों की संख्या एवं आकार में वृद्धि हुई। इस प्रकार सहकारिता आन्दोलन को द्वितीय विश्व युद्ध से बहुत अधिक प्रोत्साहन मिलां युद्ध काल में 1939 से 1946 तक समितियों की संख्या में 41 प्रतिशत, सदस्यों की संख्या में 70 प्रतिशत तथा क्रियाशील पूँजी में 54 प्रतिशत वृद्धि हुई। इसके फलस्वरूप जबकि यह आंदोलन सन् 1947–48 में बढ़कर 17 हो गया। किन्तु उत्पादन समितियों तथा उपभोक्ता भण्डारों के निर्माण के बाद भी सहकारी साख मितियों की ही प्रधानता रही। 1945–46 ये कुल समितियों की संख्या लगभल 72.7 प्रतिशत थीं।

इस प्रकार रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना तथा कृषि साख विभाग की सक्रियता ने कुछ सीमा तक सहकारी बैंकों को प्रोत्साहन दिया। प्रान्तीय विषय होने के कारण अब इस आन्दोलन को सफल बनाने का सारा उत्तरदायित्व प्रानतीय सरकारों पर था। फलस्वरूप द्वितीय विश्वयुद्ध के पूर्व तक यह आंदोलन संतोषजनक गति प्राप्त कर चुका था। किन्तु युद्ध के प्रारम्भ होते ही अनेक कठिनाइयाँ भारतीय जनता को अनुभव होने लगीं। जैसे आवश्यक वस्तुओं का अभाव, मुनाफाखोरी आदि। फलस्वरूप सहकारी सख समितियों के अतिरिक्त तीन अन्य प्रकार की सहकारिता समितियों का विकास युद्ध काल में हुआ–(1) उपभोक्ता सहकारी भण्डार, (2) सहकारी विक्रय समितियाँ एवं (3) कुटीर उद्योग से सम्बन्धित सहकारी समितियाँ। राज्यों के सहकारी विभागों से अनुदान प्राप्त करके इन समितियों ने सहकारी आन्दोलन के इतिहास में एक मोड़ ला दिया ओर जहाँ अब तक जनता और सरकार का ध्यान व्यावहारिक रूप में सहकारी साख पर ही केन्द्रित था, अब सहकारिता के अन्य पहलुओं का भी महत्त्व बढ़ गया।

संदर्भ सूचीः–

1. Wadia & Merchant : Our Economic Problems, P. 250.
2. Report onCertain Aspects of Cooperative Movement in India (1957).
3. Third Five. Year plan, PP. 201-02.
4. हेनरी डब्ल्यू, वुल्फ : 'पीपुल्स बैंक, पृ0 421.
5. जॉन डब्ल्यू0 मिलौर : दि एवोल्यूसन ऑफ रूरल डेवलेपमेंट पॉलिसीः मिलोर वीवर लेले एण्ड साइमन–डेवलपिंग रूरल इंडिया : प्लैन एंड प्रैक्टिस पृ0 65.
6. गुन्नार मिर्डाल : एशियन ड्रामा, पृ0 1335.
7. `Ecinomic Times, November 29, 1893.